एक योगी एक भोगी

(चित्त-संभूति)

लेखकः – डॉ. पदमचन्द्र जी म. सा.

बड़ी साधु वन्दना सचित्र कथायें भाग 5

Scanned by CamScanner

एक योगी, एक भोगी

(चित्त-संभूति)

काव्य के माध्यम से मन के विहंगम भावों को हृदय की अतुल गहराईयों में स्पर्श करने वाले शब्दों में चित्रित करने वाले 17वीं शताब्दी के महान् संत कविकुल-शिरोमणि एकभवावतारी आचार्यसम्राट् पूज्य श्री जयमल जी म. सा. की दिव्य काव्य-कृति **"बड़ी साधु वंदना"** की चौदहवीं कड़ी में **'चित्त और संभूति'** का प्रेरक कथा-प्रसंग सन्दर्भित है। महाकवि ने श्रेष्ठ श्रमण-साधक मुनीश्वर चित्त को श्रद्धायुत प्रणति दी है।

तत्त्व मनीषी डॉ. पद्मचन्द्र जी म. ने अपनी ओजस्वी लेखनी से चित्रकथा में उन्हीं महनीय मुनीश्वर के पावन प्रसंग का सरस शैली में प्रस्तुतीकरण किया है। चित्रों का सुन्दर निर्देशन किया है। कथानक के इन भावयुक्त चित्रों को देखकर पाठक निश्चय ही कथा की गहराई में उतर सकेगा।

कथानक के पूर्वार्द्ध में चित्त और संभूति के पिछले पाँच जन्मों का संक्षिप्त घटनाक्रम दिया है। पाँच भवों तक सहोदर रहने के पश्चात् छट्ठे भव में इन दोनों का जन्म अलग-अलग कुलों में होता है। संभूति का जीव अपनी मोक्षदायिनी साधना और तप के फल से निदान स्वरूप ब्रह्मदत्त नाम का चक्रवर्ती राजा बनता है, जबकि चित्त पुनः श्रमण-साधना के पथ पर अग्रसर हो जाते हैं। चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त को जब इसका पता चलता है तो उसे चित्त का योगीपना नहीं सुहाता। वह उनके दर्शनार्थ जाकर उन्हें भोगों के लिए आमंत्रित करता है। उधर मुनि चित्त, चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त को समझाते हैं कि भोग दुःखदायी हैं, योग ही श्रेयस्कर है। दोनों अपने-अपने तर्कों से एक-दूसरे को आकृष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। अंत में यद्यपि योग-पथ की श्रेष्ठता और उसको श्रेयस्कर मानते हुए भी चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त अपने को दल-दल में फँसे हाथी की तरह बताकर सुधर्म के पथ पर बढ़ने में अपनी असमर्थता बताता है।

इस प्रकार कथा में भोग और योग के द्वन्द्व और उसके दुष्परिणाम और सुपरिणाम लक्षित होते हैं। इस कथा की प्रमुख विशेषता है—निदान (काम-भोगों की तीव्र लालसा) की विवशता। काम-भोग ही आत्मा के लिए सबसे बड़े बन्धन हैं। इसकी आसक्ति के कारण ही जीव दुर्गति में जाकर दुःख भोगता है।

यह सम्पूर्ण प्रसंग सुज्ञ पाठकों में योग, संयम और धर्म के प्रति रुचि जागृत करने वाला है। आशा है पाठकगण कथानक से प्रेरणा प्राप्त कर अपने जीवन में धर्म-पथ पर अग्रसर होंगे।

—उपाध्याय प्रवर श्री पार्श्वचंद्र जी म. सा.

❑ लेखक : डॉ पदमचन्द्र जी म. सा.

❑ सम्पादक : संजय सुराना

❑ प्रथमावृत्ति : अक्षय तृतीय पारणा
वैशाख सुद 3, वि. सं. 2065,
8 मई 2008

❑ प्रतियाँ : दस हजार

❑ मूल्य : पच्चीस रूपये मात्र

• प्रकाशक : •

श्री जयमल जैन पार्श्व-पद्मोदय फाउण्डेशन, चेन्नई

Jay Vatika, Marlesha Garden,
48, Hunters Road (Gopal Menon Street),
Vapery, Chennai-600 112

• डिजाइन एवं प्रिंटिंग : •

पद्मोदय प्रकाशन

A-7, अवागढ़ हाउस, अंजना सिनेमा के सामने,
एम.जी. रोड, आगरा-2 दूरभाष : 09319203291

Scanned by CamScanner

एक योगी एक भोगी

(चित्त-संभूत)

आशीर्वादप्रदाता

जयगच्छाधिपति आचार्यप्रवर श्री शुभचन्द्र जी म. सा.

संयम शिरोमणि पण्डित रत्न उपाध्यायप्रवर

श्री पार्श्वचन्द्र जी म. सा.

लेखक

जयगच्छीय दशम पट्टधर आचार्यप्रवर

श्री लालचन्द्र जी म. सा. के सुशिष्य

डॉ. श्री पदमचन्द्र जी म.सा.

सम्पादक : संजय सुराणा

प्रकाशक : श्री जयमल जैन पार्श्व-पद्मोदय फाउण्डेशन, चैन्नई

Scanned by CamScanner

अनुक्रमणिका

पूर्व भव

दासी पुत्र

हरिण युगल–हंस युगल

चित्त–संभूत

नमुचि की प्राण रक्षा

मुनि द्वारा प्रतिबोध

संभूत मुनि का अपमान

तेजोलेश्या का प्रयोग

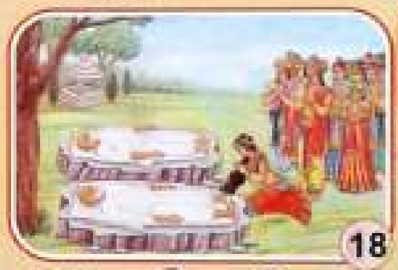

संभूत मुनि का निदान

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती

पूर्व भवों की स्मृति

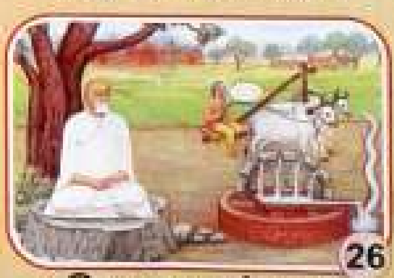

मुनिवर द्वारा श्लोक पूर्ति

सहोदरों का मिलन

योगी मुनि का उद्‌बोधन

योगी की सुगति –भोगी की दुर्गति

Scanned by CamScanner

एक योगी एक भोगी (चित्त-संभूत)

मुनि बल हरिकेशी, चित्त मुनीश्वर सार।
शुद्ध संयम पाली, पाम्या भवनो पार।।१४।।

पूर्व भव

प्राचीनकाल में साकेत जनपद पर जिनधर्मी राजा चन्द्रावतंसक का राज्य था। उसके मुनिचन्द्र नाम का एक पुत्र था। राजकुमार मुनिचन्द्र अत्यन्त विनम्र और सरल स्वभावी था। राजा के स्वर्गवास के पश्चात् मुनिचन्द्र राजगद्दी पर बैठा। बहुत काल तक राज्य का शासन सुचारू रूप से चलाने के पश्चात् जैन मुनियों का वैराग्य-परक उपदेश सुनकर उसे संसार के काम-भोगों से विरक्ति हो गई और उसने राज्य-वैभव त्यागकर जैन भागवती दीक्षा अंगीकार कर ली। अब वे अपना जीवन संयमाराधन करते हुए विचरण करने लगे।

एक बार विहार करते-करते मुनिचन्द्र मुनि किसी घने वन में राह भटक गए। कई दिनों तक उस अटवी में भटकते हुए मुनिचन्द्र मुनि भूख-प्यास से अत्यंत व्याकुल हो गये। इधर-उधर भटकते हुए वे एक गोकुल के पास पहुँचे पर क्षुधा-तृषा की पीड़ा से मूर्च्छित होकर गिर पड़े।

Scanned by CamScanner

उस गोकुल के चार गोपालक-पुत्र नित्य अपनी गायें चराने वन में जाया करते थे। गायें चराते-चराते वे उधर पहुँच गए जहाँ मुनिचन्द्र मुनि मूर्च्छित अवस्था में जमीन पर पड़े हुए थे। चारों ने मूर्च्छित मुनि को देखा तो अन्तःकरुणा से प्रेरित होकर उन्होंने मुनि की परिचर्या की। गोपालक-पुत्रों की परिचर्या से कुछ ही समय में मुनि की मूर्च्छा दूर हो गई। तब गोपालक-पुत्रों ने मुनि से अपने साथ लाये गये दही-छाछ व भोजन को लेने का निवेदन किया। मुनि ने प्रासुक एवं एषणीय आहार जानकर उसे ग्रहण कर लिया। आहार करने के पश्चात् मुनि ने उन चारों युवकों को धर्मोपदेश सुनाया, जिसे सुनकर उन्हें प्रतिबोध प्राप्त हुआ और उनके मन में दीक्षा लेने के भाव जागृत हो गये।

संध्या के समय वे वापस गाँव पहुँचे और अपने माता-पिता से दीक्षा लेने की आज्ञा माँगी। स्वीकृति पाकर अगले दिन उन चारों ने मुनि के श्रीमुख से दीक्षा अंगीकार कर ली। उन चारों में से दो मुनियों ने निर्लिप्त भाव से शुद्ध श्रमणधर्म का पालन किया और शेष दो मुनियों के मन में साधुओं के मलिन वेष के प्रति जुगुप्सा भाव रह गया।

दासी पुत्र

उत्कृष्ट, श्रमणधर्म-साधना के फलस्वरूप वे चारों अपना आयुष्य पूर्णकर देवलोक में देव बने। वहाँ का आयुष्य पूर्ण होने पर जिन दो मुनियों के मन में साधुओं के मलिन-वस्त्रों के प्रति घृणा का भाव था, वे दोनों दर्शाणपुर नगर में शाँडिल्य नामक ब्राह्मण की दासी यशोमति के गर्भ से युगलरूप मे उत्पन्न हुए।

इन दासी-पुत्रों के बड़े होने पर इनके मालिक ने इन दोनों से कठोर श्रम करवाना प्रारम्भ कर दिया। एक दिन उसने कहा–"तुम दोनों मेरे खेत पर कार्य करो। यदि तुमने परिश्रम से कार्य किया और खेत में अच्छी पैदावार हुई तो मैं तुम्हारा विवाह करा दूँगा।"

दोनों दासी-पुत्र युवावस्था प्राप्त कर चुके थे। विवाह का प्रलोभान उनके लिए बहुत बड़ा आकर्षण था। वे रात-दिन खेत पर ही रहकर कठिन श्रम करने लगे। जी-तोड़कर मेहनत करने से ब्राह्मण के खेत में फसल लहलहाने लगी। फसल देखकर वे दोनों आपस में बातें करते रहते–"इस वर्ष फसल बहुत अच्छी होगी।" "हाँ भाई ! अब मालिक हमसे प्रसन्न होकर हमारा विवाह करवा देंगे।" वे अपने सुखद भविष्य की कल्पना कर प्रसन्न होते रहते, पर भविष्य कुछ और ही था। एक दिन वे दोनों सहोदर खेत में काम कर रहे थे कि अचानक आकाश में

Scanned by CamScanner

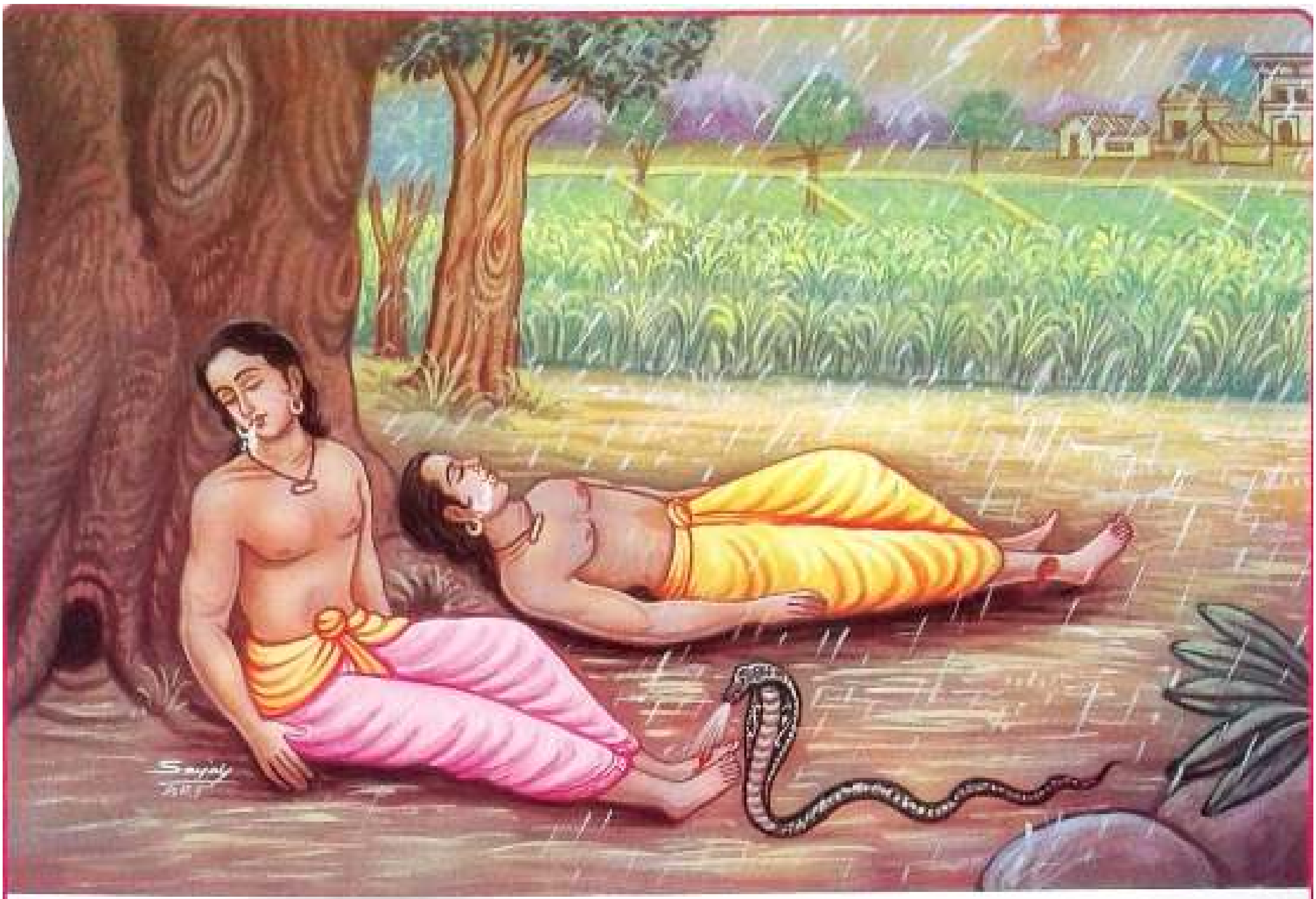

घनघोर काली घटाएँ छा गईं। मूसलाधार पानी बरसने लगा। वे वर्षा से बचने के लिये खेत के पास में ही एक विशाल वट वृक्ष के नीचे बैठ गए। धीरे-धीरे शाम घिर आई। अंधेरा छाने लगा। ऐसे में एक विषधर सर्प जो वर्षा से बचने के लिए उसी वृक्ष की कोटर में रेंग कर चला गया था। अंधेरे में बाहर निकल आया और वृक्ष के नीचे बैठे दोनों भाईयों को डस लिया। सर्प अत्यंत विषैला था। दोनों भाईयों की तत्काल ही मृत्यु हो गई।

हरिण युगल–हंस युगल

तदनन्तर उन दोनों भाईयों के जीव कालिंजर नामक पर्वत पर एक हरिणी के उदर से हरिण-युगल के रूप में उत्पन्न हुए। युवा होने पर वे अपनी माँ के साथ वन में चौकड़ियाँ भरते हुए इधर-उधर विचरण करने लगे थे। एक दिन तीव्र गर्मी में प्यास से व्याकुल होकर हरिण-युगल उसी जंगल में बहने वाली नदी के तट पर पानी पीने गया, तभी एक शिकारी के एक ही तीर ने दोनों को साथ-साथ बींध दिया। कुछ क्षणों की छटपटाहट के पश्चात् उन दोनों ने दम तोड़ दिया।

हरिण के भव से निकलकर दोनों ही मृतगंगा नदी के तट पर स्थित एक सरोवर में हंसिनी के गर्भ से हंस-युगल के रूप में उत्पन्न हुए। सरोवर में

Scanned by CamScanner

क्रीड़ा-कल्लोल करते-करते दोनों युवा हो गए। एक दिन वे दोनों सरोवर के किनारे क्रीड़ा कर रहे थे तभी एक मछुए के बिछाए जाल में फँस गए। मछुए ने उन्हें पकड़ा और उनकी गर्दन मरोड़ कर उनके प्राण हरण कर लिए।

चित्त संभूत

हंस-योनि में अकाल-मृत्यु का शिकार बनकर उन दोनों ने काशी जनपद की वाराणसी नगरी के समृद्धशाली चाण्डाल भूतदिन्न की पत्नी अणहिया के गर्भ से युगल सहोदर के रूप में जन्म लिया। भूतदिन्न ने एक का नाम चित्त और दूसरे का नाम संभूत रखा। माता-पिता ने अत्यंत लाड़-प्यार से उनका लालन-पालन किया। दोनों युगल भ्राताओं में परस्पर अपरिमित स्नेह था। चांडाल कुल में उत्पन्न होकर भी दोनों सुन्दर और सुडौल थे।

उस समय वाराणसी नगर का अधिपति राजा शंख था। उसके मन्त्री का नाम था नमुचि। एक बार मंत्री नमुचि से कोई भयंकर अपराध हो गया। राजा शंख, नमुचि के उस अपराध से अत्यधिक कुपित हुआ। उसने चाण्डाल भूतदिन्न को आदेश दिया–"इस दुष्ट मन्त्री को जंगल में ले जाकर वध कर दो।"

चाण्डाल भूतदिन्न वध के लिए नमुचि को नगर से दूर घने जंगल में ले गया। जब उसने वध के लिये तलवार निकाली तो मन्त्री ने गिड़गिड़ाते हुये अपनी प्राण रक्षा की गुहार की। भूतदिन्न को मन्त्री के गिड़गिड़ाने पर दया आ गई। वह बोला–"मन्त्रीश्वर ! यदि आप मेरे बालकों को अध्ययन करा दें और उन्हें संगीत आदि कलाओं में निपुण कर देवें तो मैं राजाज्ञा के विरुद्ध आपको छोड़ दूँगा।" मन्त्री ने अपनी जान बचाने के लिए भूतदिन्न की शर्त तुरन्त स्वीकर कर ली।

आधी रात के बाद चुपचाप भूतदिन्न, मंत्री नमुचि को लेकर अपने घर आया और भूतल के नीचे बने तहखाने में उसे छोड़ दिया। नमुचि वहीं छुपकर रहते हुए भूतदिन्न के दोनों पुत्रों को विद्याओं और कलाओं का अध्ययन कराने लगा। कुछ ही वर्षों में चित्त और संभूत अनेक विद्याओं व कलाओं में प्रवीण बन गए।

इन वर्षों में भूतदिन्न की पत्नी ने नमुचि की यथेष्ठ सेवा की। वह तहखाने में भोजनादि स्वयं लेकर जाती थी। वह एक आकर्षक नयन-नक्श वाली सुन्दर नारी थी और नमुचि रूप-रसिक एवं कामी-पुरुष था अतः वह नमुचि के आकर्षण का केन्द्र बन गई। उस पर आसक्त होकर नमुचि ने उससे अनुचित सम्बन्ध बना लिए। कई दिन तक उस तहखाने में वासना का यह खेल चोरी-छुपे चलता रहा।

Scanned by CamScanner

एक दिन भूतदिन्न को नमुचि के साथ अपनी पत्नी के नाजायज सम्बन्धों का पता लग गया। भूतदिन्न का तन-बदन क्रोध से जल उठा—'ओह ! यह दुष्ट, जिस थाली में खाता है, उसी में छेद करता है। ऐसे नीच कामी पुरुष को जिन्दा रहने का कोई अधिकार नहीं है।'

उसी समय वह अपराधियों का शिरोच्छेद करने वाले औजार को घिसकर उसकी धार को तीक्ष्ण करने लगा और क्रोध से बड़बड़ाने लगा—'दुराचारी नमुचि ! आज तेरी मौत तुझे पुकार रही है।'

नमुचि की प्राण रक्षा

संयोगवश चित्त व संभूत ने अपने पिता के मुख से निकले इन शब्दों को सुन लिया। चित्त बोला—"भाई ! लगता है पिताजी किसी कारणवश नमुचि पर अत्यंत क्रुद्ध हैं और उसे आज ही मौत के घाट उतारने के लिए संकल्पित हो चुके हैं।" संभूत ने कहा—"तुम ठीक कहते हो। परन्तु वे हमारे गुरु हैं। उनकी प्राण रक्षा

Scanned by CamScanner

करनी चाहिए।" दोनों के ही मन में अपने विद्या-गुरु के प्रति स्नेहभाव था। कृतज्ञतावश उन्होंने समय रहते नमुचि को सारी बात बताकर उसे सचेत कर दिया—"पिताजी किसी कारणवश आपको मार डालना चाहते हैं। आप यहाँ से भाग जाईये।"

नमुचि अपनी मृत्यु की बात सुनकर डर गया। तहखाने से निकलकर वह दोनों बालकों की सहायता से उस विशाल घर के पिछवाड़े पहुँचा और वहाँ बने गुप्त छोटे द्वार को खोलकर बाहर निकल गया। किसी तरह छुपते-छुपाते हुए वह निकट के घने वन में पहुँचकर बेतहाशा दौड़ने लगा जैसे अभी भी मौत उसका पीछा कर रही हो।

नमुचि कई दिन तक भूखा-प्यासा निरंतर उस भयानक अटवी में दौड़ता रहा और एक दिन वह हस्तिनापुर नगर की सीमा पर पहुँच गया। वहाँ मानो उसका भाग्य उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। संयोग ऐसा बना कि वह हस्तिनापुर राज्य के चक्रवर्ती महाराज सनत्कुमार का मंत्री बना दिया गया।

इधर हत्या के लिये शस्त्र की धार जब पर्याप्त पैनी हो गई तो भूतदिन्न नमुचि की हत्या करने के उद्देश्य से तहखाने में पहुँचा। उसने देखा कि नमुचि वहाँ नहीं है—"कहाँ गया दुष्ट नमुचि ?" क्रोधाविष्ट भूतदिन्न ने पूरा तहखाना छान मारा। नमुचि नहीं मिला तो गुस्से से बिफरता हुआ बाहर आकर अपने विशाल दुमंजिले घर में उसे तलाशने लगा। इस पर भी जब नमुचि नहीं मिला तो उसे अपनी पत्नी पर संदेह हुआ—'लगता है दुष्टा को मेरे इरादे का पता चल गया। इसीलिये उसने अपने प्रेमी को भगा दिया।' वह जहर का घूँट पीकर चुप रह गया। पत्नी पर अत्यधिक स्नेह होने के कारण उसने उससे कुछ नहीं कहा।

उधर नमुचि ने हस्तिनापुर राज्य के मंत्री पद पर रहते हुए चक्रवर्ती सनत्कुमार तथा राज्याधिकारियों आदि के मन में अपना स्थान बना लिया।

कुछ समय पश्चात् वाराणसी में बसन्त ऋतु के आने पर प्रतिवर्ष की भाँति राज्य की ओर से वसन्तोत्सव मनाने की तैयारियाँ होने लगीं। तीन दिन तक नगर के बाहर राज्योद्यान में धूमधाम से वसन्तोत्सव मनाया गया। बाल-सुलभ उत्सुकतावश चित्त व संभूत भी उस महोत्सव को देखने चले गए। उत्सव-स्थल पर कहीं गीतों की मधुर स्वर लहरियाँ बिखर रही थीं तो कहीं वाद्य-यंत्रों की धुनों की सरिता बहाते हुए संगीत की ध्वनियाँ जन-जन को मदमस्त बना रही थीं और

Scanned by CamScanner

इन सारे विभिन्न कार्यक्रमों को देखते-देखते चित्त और संभूत के मन में भी अपने गुरु नमुचि से प्राप्त संगीत-कला के प्रदर्शन की कामना जागृत हो गई।

तरुणावस्था की सीढ़ियों पर कदम रख रहे उन दोनों बालकों ने एक स्थान पर अपनी गायन व संगीत कला का प्रदर्शन प्रारम्भ कर दिया। अपनी कला में तो वे प्रवीण थे ही, डील-डौल में भी सुन्दर और आकर्षक व्यक्तित्व वाले थे। धीरे-धीरे लोग उनके गीत-संगीत की ओर आकर्षित होने लगे। थोड़े ही समय में वहाँ सैकड़ों की संख्या में भीड़ एकत्रित हो गई। लोग मुग्ध बन उन्हें सुनने लगे। गीत-संगीत के माधुर्य में वे सभी स्पृश्य-अस्पृश्य की भावना को भूल गए और कला की गरिमा में खो गए।

कुछ ब्राह्मण भी वहाँ पहुँचे। उन्हें चाण्डाल-पुत्रों का इस तरह उत्सव में कला-प्रदर्शन और उनकी कला पर जनता का मंत्र-मुग्ध बनना अच्छा नहीं लगा।

Scanned by CamScanner

उनके भीतर का जाति अभिमान जाग उठा। वे सभी राजा के पास पहुँचे और शिकायत के स्वर में राजा से बोले—"राजन् ! चाण्डाल भूतदिन्न के दोनों पुत्रों ने जनता का धर्म नष्ट कर दिया है। इनकी गीत-संगीत कला पर मुग्ध लोग स्पृश्यापृश्य मर्यादा को भंग करके इनकी स्वेच्छाचारी प्रवृत्ति को प्रोत्साहित कर रहे हैं।"

ब्राह्मणों के मुख से चाण्डाल-पुत्रों की शिकायत सुनकर राजा शंख कुपित हो गया। उसने सैनिकों को आदेश दिया—"जाओ, दोनों चाण्डाल-पुत्रों को तुरन्त ही राज्य से बाहर निकाल दो।" राज्य कर्मचारियों ने उन्हें प्रताड़ित करते हुए नगर से बाहर तक खदेड़ दिया और चेतावनी देते हुए कहा—"खबरदार, जो अब वाराणसी राज्य की सीमा के भीतर दीखे।"

एक बार जब वाराणसी में कौमुदी महोत्सव मनाया गया तो दोनों तरुण अपने राज्य-निष्कासन की पीड़ा को भूल, अपना चेहरा व वेष बदलकर उत्सव में गए। उत्सव में संगीत का कार्यक्रम चल रहा था, जिसे देख व संगीत के स्वर सुनकर उन भाईयों से रहा नहीं गया। उनके मुख से संगीत की मधुर स्वर-लहरियाँ निकलकर वातावरण में प्रवाहित होने लगीं। विलक्षण स्वर साधना थी दोनों की। अतः अनेक रमणियाँ व पुरुष वहाँ एकत्रित हो मंत्रमुग्ध बन उन्हें सुनने लगे। अपनी धुन में मगन इन भाईयों के स्वर व इनके बदले रूप को कुछ लोगों ने पहचान लिया।

इस बार इन ईर्ष्यालु और जातिमदान्ध लोगों ने राजा के पास जाकर शिकायत नहीं कि अपितु वे कहने लगे—"मारो इन्हें ! ये चाण्डाल-पुत्र हैं। राज्य से निष्कासित हैं ये ! हम नगरवासियों का धर्म-भ्रष्ट कर रहे हैं ये।"

इतना कहकर कहने वाले स्वयं आगे बढ़ दोनों को पकड़कर पीटने लगे। अन्य लोग भी उन्हें पीटने का आनन्द लेने लगें जाति के कट्टर उन अभिमानियों ने इन दोनों को बहुत मारा-पीटा और फिर उन्हें ले जाकर नगर के बाहर छोड़ दिया।

अत्यंत मार-पीट से पीड़ित, जन-जन द्वारा तिरस्कृत और प्रताड़ित वे दोनों भ्राता अपने इस जीवन को व्यर्थ समझने लगे। चित्त बोला—"भैया ! ऐसा जीवन जीने की अपेक्षा मृत्यु को गले लगाना ज्यादा अच्छा है।"

Scanned by CamScanner

"हाँ भाई तुम ठीक कहते हो।" और दोनों आत्महत्या के लिए तत्पर हो गए। प्राण देने के लिए उन्होंने निकटस्थ पहाड़ी के शिखर पर चढ़कर वहाँ से नीचे छलाँग लागने का निश्चय किया।

मुनि द्वारा प्रतिबोध

वे दोनों आत्महत्या के उद्देश्य से एक पहाड़ी पर चढ़ने लगे। पर्वत-शिखर पर पहुँचकर वे वहाँ से कूदने ही वाले थे कि तभी किन्हीं जैन मुनि की दृष्टि उन पर पड़ी। पलक झपकते ही वह समझ गए कि दोनों आत्महत्या करने के उद्देश्य से शिखर पर चढ़े हैं। उन्होंने वहीं से आवाज लगाई—"रुको ! रुक जाओ।"

एकांत पर्वत-शिखर पर किसी मानव की आवाज सुनकर दोनों भाई चौंक गए। उन्होंने पीछे घूमकर देखा तो जैन मुनि दिखाई दिए, जिनका एक हाथ ऊपर था और उन्हें रोकने का संकेत कर रहा था।

मुनि के निकट आने तक वे दोनों भाई वहीं रुके रहे। जैन मुनि पास आ गये तो उन्हें वन्दन किया और पूछा—"भगवन् ! आपने हमें मरने से क्यों रोका ? मरने दिया होता हमको।"

Scanned by CamScanner

जैन मुनि बोले—"नौजवानों ! आत्महत्या करना महापाप है। तुम इस महापाप के भागी क्यों बनना चाहते हो ? क्या दर्द है तुम्हें ?

चित्त और संभूत एक साथ बोले—"भगवन् ! हम दोनों बहुत दुःखी हैं और मरकर हम अपने सारे दुःखों से छुटकारा पाना चाहते हैं। हम जाति के चाण्डाल हैं। हीन कुल के होने से अस्पृश्य हैं। सभी लोग हमसे अत्यंत घृणा करते हैं ? ऐसी घृणा के साथ हम कैसे जी सकते हैं ?"

मुनिराज ने उनसे पूछा—"क्या इस प्रकार बिना मौत मरने से तुम लोगों के दुःखों का छुटकारा हो जाएगा ? क्या यह निश्चित है कि तुम्हारा पुनर्जन्म चाण्डाल कुल में नहीं होगा और यदि होगा तो तुम्हें उस नवीन जन्म में अपने किए बुरे कर्मों का बुरा परिणाम नहीं भोगना पड़ेगा ?"

चित्त और संभूत यह सुनकर चिन्ता में पड़ गए। उन दोनों ने मुनिवर से प्रश्न किया—"महाराज ! फिर हम क्या करें ?"

मुनिराज ने कहा—"बंधुओं ! यह निश्चय मानो कि आत्महत्या करना कायरों का काम है। इससे दुःखों का अन्त होने के स्थान पर दुःख और अधिक बढ़ जायेंगे। बुद्धिमान व्यक्ति कभी भी आत्महत्या करना उचित नहीं मानते। तुम दोनों भी बुद्धिमान और प्रबुद्ध-आत्मा लगते हो। अगर तुम लोग अपने शारीरिक और मानसिक समस्त दुःखों से सदा-सर्वदा के लिए छुटकारा पाना चाहते हो तो श्रमणधर्म की साधना करो, मुनि बनकर धर्म की शरण ग्रहण करो।"

इस तरह मुनिराज के समझाने और उनका आत्महितकारी उद्‌बोधन सुनने से चित्त व संभूत की आत्मा जागृत बन गई, वे मुनि बनने को तत्पर हो गए।

उन्होंने वहीं मुनिवर से दीक्षा-मंत्र लेकर श्रमणधर्म स्वीकार किया और मुनि बन गये और सत्य-धर्म की साधना प्रारम्भ कर दी।

गुरु की चरण-शरण में रहकर दोनों मुनियों ने शास्त्रों का अध्ययन करना प्रारम्भ किया। बुद्धि से वे विलक्षण तो थे ही अतः शीघ्र गीतार्थ बन सभी शास्त्रों के अर्थ, भावार्थ व गूढ़ार्थ को जान गए। शास्त्राध्ययन के साथ ही साथ दोनों मुनियों ने बारह प्रकार की उत्कृष्ट तपस्या भी प्रारम्भ कर दी। उग्र तपस्या के फलस्वरूप उन्हें अनेक लब्धियाँ प्राप्त हो गईं।

Scanned by CamScanner

संभूत मुनि का अपमान

अब वे दोनों मुनिगण ग्रामानुग्राम विहार करते हुए जिनधर्म की प्रभावना करने लगे। एक बार वे हस्तिनापुर पधारे और नगर के बाहर स्थित राजोद्यान में राज्याधिकारी की आज्ञा लेकर रुक गये। वहाँ रहकर वे ज्ञान-ध्यान और साधना करने लगे। आज दोनों मुनिवरों का मासक्षमण का पारणा था। संभूत मुनि पारणे के लिए भिक्षार्थ नगर में पधारे। एषणीय आहार की गवेषणा करते हुए संभूत मुनि नगर के राजपथों पर अपनी भिक्षापात्रों की झोली लेकर चले जा रहे थे और उधर राजमंत्री नमुचि किसी राजकीय कार्यवशात् हस्तिनापुर के राजपथों पर अपने सेवकों व राजकर्मियों के साथ निकल रहा था। अचानक उसकी दृष्टि इन जैन मुनि पर पड़ी। उसने तुरन्त ही संभूत मुनि को पहचान लिया—"अरे ! यह तो वाराणसी के चाण्डाल भूतदित्र का पुत्र संभूत है। दो भाई थे ये। यह है तो इसका भाई भी इसके साथ यहीं-कहीं होगा।"

मुनि के रूप में संभूत को देख नमुचि मन ही मन भयभीत हो गया। उसने

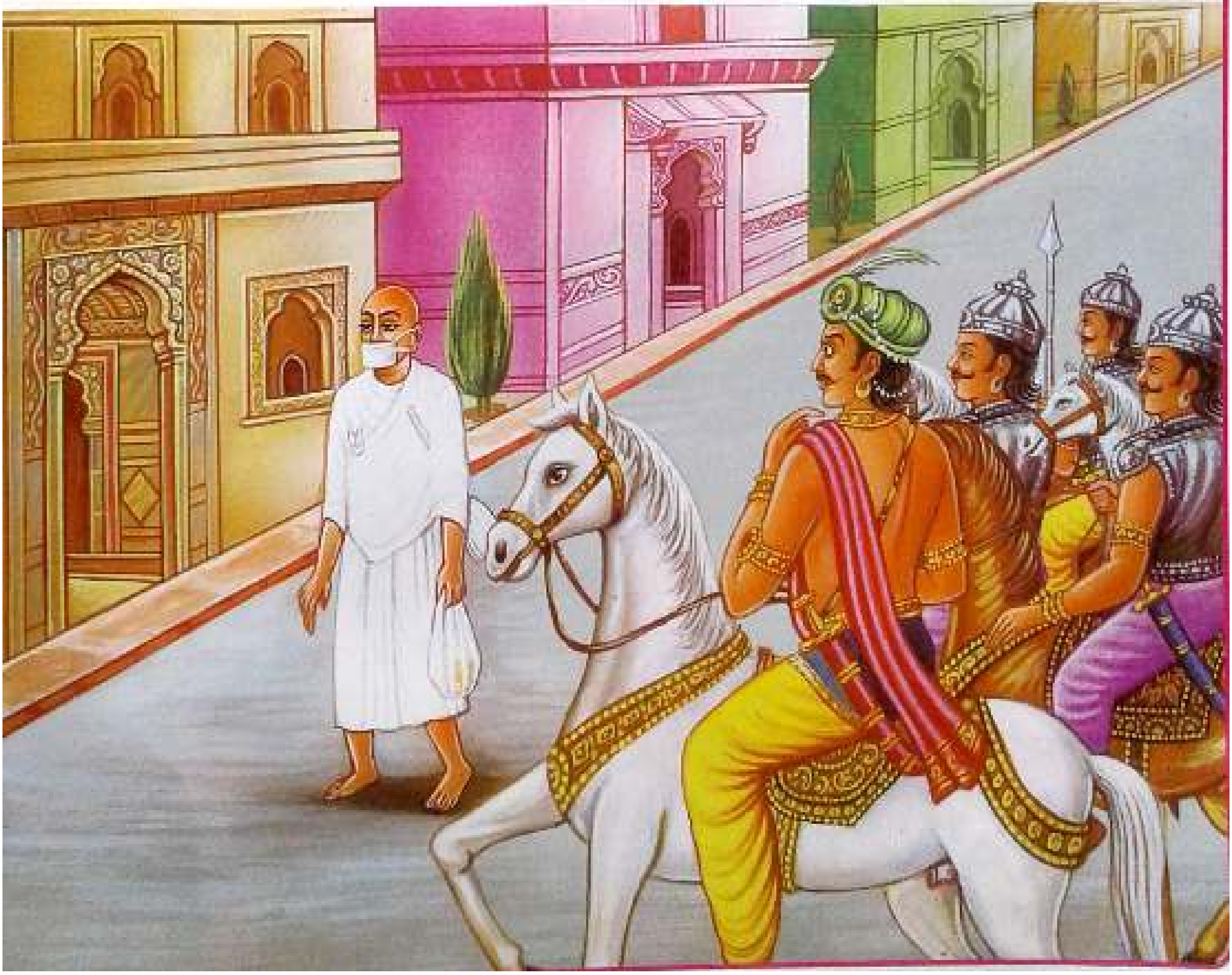

Scanned by CamScanner

सोचा—'कहीं यह मेरा भेद न खोल दें। कहीं मेरी वही हालत यहाँ भी न हो जाए, जो वाराणसी में हुई थी।'

अब नमुचि ने सोचा—'ये दोनों भाई मेरे पूर्वकृत दुष्कर्मों से परिचित हैं। इस राज्य के स्वामी चक्रवर्ती सनत्कुमार जैन धर्मानुरक्त होने से इन मुनिवृंद के दर्शन-वन्दन करने एवं धर्मोपदेश सुनने अवश्य जायेंगे। वहाँ यदि मुनियों ने मेरे विषय में जो कुछ घटित हुआ, वह प्रकट कर दिया तो मेरा क्या होगा ? मेरा पूर्व जीवन-वृत्तान्त यदि महाराज के समक्ष उजागर हो गया तो एक तरह से अनर्थ ही हो जायेगा। यहाँ का मंत्री-पद जाएगा, प्रतिष्ठा समाप्त होगी, कहीं का नहीं रहूँगा फिर मैं तो।'

अपना भेद खुल जाने के डर से नमुचि ने अपने साथ के सुभटों को कहा—"यह जो मुनि दिखाई दे रहा है। यह ढोंगी है। वास्तव में यह वाराणसी से राज्य-निष्कासन का दण्ड भोग रहा चांडाल है। यह यहाँ फिर सबका धर्म भ्रष्ट करेगा। तुम लोग इसे पीट-पीटकर नगर से बाहर निकाल दो।"

नमुचि के सुभटों ने अपने स्वामी की आज्ञा का पालन किया। उन्होंने मुनि संभूत को घूंसों, लातों व डंडों से खूब पीटा। वे उसे पीटते गए और कहते गए—"चांडाल होकर मुनिवेष में लोगों को ठगते हो। राजा शंख ने तुम्हें राज्य निष्कासन का दंड दिया था। वह तो अच्छा हुआ हमने तुम्हें पहचान लिया। अब भलाई इसी में है कि चुपचाप यह नगर छोड़कर अन्यत्र चले जाओ।"

बहुत समय तक मुनिवर ने समभाव से सुभटों के प्रहारों को सहन किया पर कब तक ? अपने ज्ञान के उपयोग द्वारा संभूत मुनि ने यह जान लिया कि इस दुष्कर्म के पीछे नमुचि का हाथ है। एक सीमा तक सहन करने के पश्चात् मुनिवर धैर्य खो बैठे और समता से विषमता में चले गए। विचलित मुनि के भीतर की संज्वलन कषाय ने तब उग्रता धारण कर ली। आवेश में आकर मुनि ने क्रोध भरे स्वर में सभी को सुनाते हुए कहा—"दुष्ट नमुचि। तुमने यह अच्छा काम नहीं किया। हम भाईयों ने तुझे मृत्यु के मुख से बचाया था और तूने हमारी भलाई का यह फल दिया। क्या बिगाड़ा था मैंने तेरा ? बिना कारण ही तुमने अपने सेवक-सुभटों को उकसाकर यह जो दुष्कर्म किया है, उसका भयानक परिणाम अकेले तुम्हें ही नहीं बल्कि हस्तिनापुर के महाराज, राजकर्मचारी व समस्त प्रजाजन को भी भोगना पड़ेगा। क्योंकि तेरी इस दुष्टता को रोकने के लिये कोई आगे नहीं आया।"

Scanned by CamScanner

तेजोलेश्या का प्रयोग

संभूत मुनि ने क्रोधाविष्ट बन तेजोलब्धि का प्रयोग करना प्रारम्भ किया। उनके बांये स्कन्ध से तेजोलेश्या निकलने लगी। कुछ ही क्षणों में गहरे धुएँ के प्रभाव से नगर जलने लगा और वह धुआँ चारों दिशाओं में फैलने लगा। देखते ही देखते वह नगर धुएँ के उस गुबार में समाने लगा। कुछ ही समय में पूरा नगर धूएँ से भर गया।

नगर के लोगों का धुएँ से दम घुटने लगा। सभी ने एक-दूसरे से उस धुएँ के विषय में जानना चाहा। जब उन लोगों को इस बात का पता चला कि धुआँ एक जैन मुनि के स्कन्ध से निकल रहा है और कारण है राज्य के सुभटों द्वारा उनकी पिटाई। सभी नागरिक भयभीत हो गये—"जाने यह धुआँ क्या कर डाले ? हम सब लोग दम घुटने से मारे जायेंगे। पूरा नगर ही नष्ट हो जायेगा।"

भयभीत नगर निवासी जहाँ मुनि खड़े तेजोलब्धि का प्रयोग कर रहे थे, वहाँ पहुँचे। सभी ने मुनिवर से करबद्ध होकर शांत बनने की प्रार्थना की—"भगवन् !

Scanned by CamScanner

हम हस्तिनापुर वासियों को क्षमादान दीजिए। आप तो क्षमा के सागर हैं। हम पर दया कीजिए महामुनि, हमें जीवन की भीख दीजिए।"

पर मुनि संभूत तो क्रोध में जल रहे थे। नागरिकों के अनुनय-विनय का उन पर किंचित मात्र भी प्रभाव नहीं पड़ा। उनका मन एक ही विचार पर केन्द्रित बना हुआ था–'नमुचि को सबक सिखाना है, इस नगर को जलाकर भस्म करना है।'

धुआँ नगर से बाहर राज्योद्यान तक भी पहुँचा। वहाँ विराजित चित्त मुनि अपने साथी भ्राता संभूत मुनि की प्रतीक्षा करते हुए स्वाध्यायलीन थे। प्रतीक्षारत चित्त मुनि ने जब चारों ओर धुँआ देखा तो समझ गए कि यह तेजोलब्धि के प्रयोग से उत्पन्न धुआँ है। उन्होंने विचार किया कि इस समय, यहाँ तेजोलब्धि का प्रयोग कौन रहा है और क्यों कर रहा है ? फिर ध्यान आया कि इस क्षेत्र में अभी तो मैं और मुनि संभूत ही तेजोलब्धि सम्पन्न हैं। मन में प्रश्न उठा–'तो क्या मुनि संभूत ने इस लब्धि का यहाँ प्रयोग किया है ?'

पहले शंका उत्पन्न हुई थी मन में, फिर निश्चय हो गया–'अवश्य भ्राता मुनि किसी कारणवश श्रमणाचार से विचलित बन गए हैं।'

होने वाले भयंकर अनर्थ का विचार कर मुनि चित्त काँप गए। सोचा–'यदि शीघ्र कुछ उपाय नहीं किया गया तो सारा नगर जल जायेगा। किसी भी तरह संभूत मुनि को शांत करना होगा। वे ही अपने द्वारा छोड़ी गई लब्धि को पुनः भीतर खींच सकते हैं। मुझे यहाँ से शीघ्र चलकर उनके पास पहुँचना चाहिए।'

चित्त मुनिवर तुरंत अपने आसन से उठे और त्वरित गति से उस ओर चल दिए, जिधर संभूत मुनि गये थे। शीघ्र ही वे वहाँ पहुँच गए, जहाँ संभूत मुनि खड़े थे। धुएँ के गुबार उनके स्कन्ध से अभी भी निकल रहे थे।

चित्त मुनि संभूत मुनि के पास पहुँचे। संभूत मुनि के कंधे पर अपना हाथ रखकर अत्यंत मधुर एवं शांत स्वर में उनको शांत बनने के लिए कहा। फिर चित्त मुनि ने संभूत मुनि को स्मरण दिलाया–"बंधु हम श्रमण हैं, संयमी हैं अतः छह काय जीवों के रक्षक व प्रतिपालक हैं। अपना ज्ञान लगाकर देखो तुम्हारे इस क्षणिक आवेश और क्रोधावेश के कारण एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय जाति तक के कितने निर्दोष जीव जीवन रहित बन जायेंगे ? देवानुप्रिय ! महाव्रती और अहिंसा के त्रिकरण-त्रियोग से पालक व पुजारी होकर भी तुम क्यों हिंसा के इस महाताण्डव के उत्तरदायी बन रहे हो ? तुम्हारे इस तरह लब्धि प्रयोग से पूरा नगर

Scanned by CamScanner

जलेगा तो जाने कितने साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकाएँ, सम्यक्त्वी व जिनवचनों के अनुयायी त्यागी-तपस्वी अकाल मृत्यु के ग्रास बन जायेंगे ?"

चित्त मुनिवर ने इसी तरह अनेक प्रकार से संभूत मुनि को समझाया और जैसे-तैसे उनके लावा उगलते क्रोध को शांत किया। संभूत मुनि का क्रोध शांत हुआ तो वे पुनः आत्म-जागृति में आ गए। उचित अवसर की प्रतीक्षा कर रहे चित्त मुनिवर ने उन्हें चैतन्य होते एवं पुनः आत्म-धर्म में प्रविष्ट होते देखा तो तुरंत बोले–"बंधु ! अब शीघ्रता करो और अपनी छोड़ी हुई इस तेजोलब्धि को पुनः अपने भीतर खींचो जिससे भयंकर अनर्थ टल जाए।"

संभूत मुनि तब तक पूर्णतः शांतमना बन चुके थे। उन मुनि ने तुरंत अपनी लब्धि का स्मरण कर उसे अपने भीतर की ओर खींचना प्रारम्भ किया। कुछ ही देर में नगर के चतुर्दिश में छाए धूम्र-गुबार समाप्त हो गए। अंधकार नष्ट होकर पुनः प्रकाश ने नगर के समस्त जीवों व पदार्थों को उद्भासित कर दिया। अनर्थ टल गया। हस्तिनापुर नगर व नगरवासियों को जीवनदान मिला। हर्षित जनता ने मुनिवर का गगन गुंजित जयनाद किया।

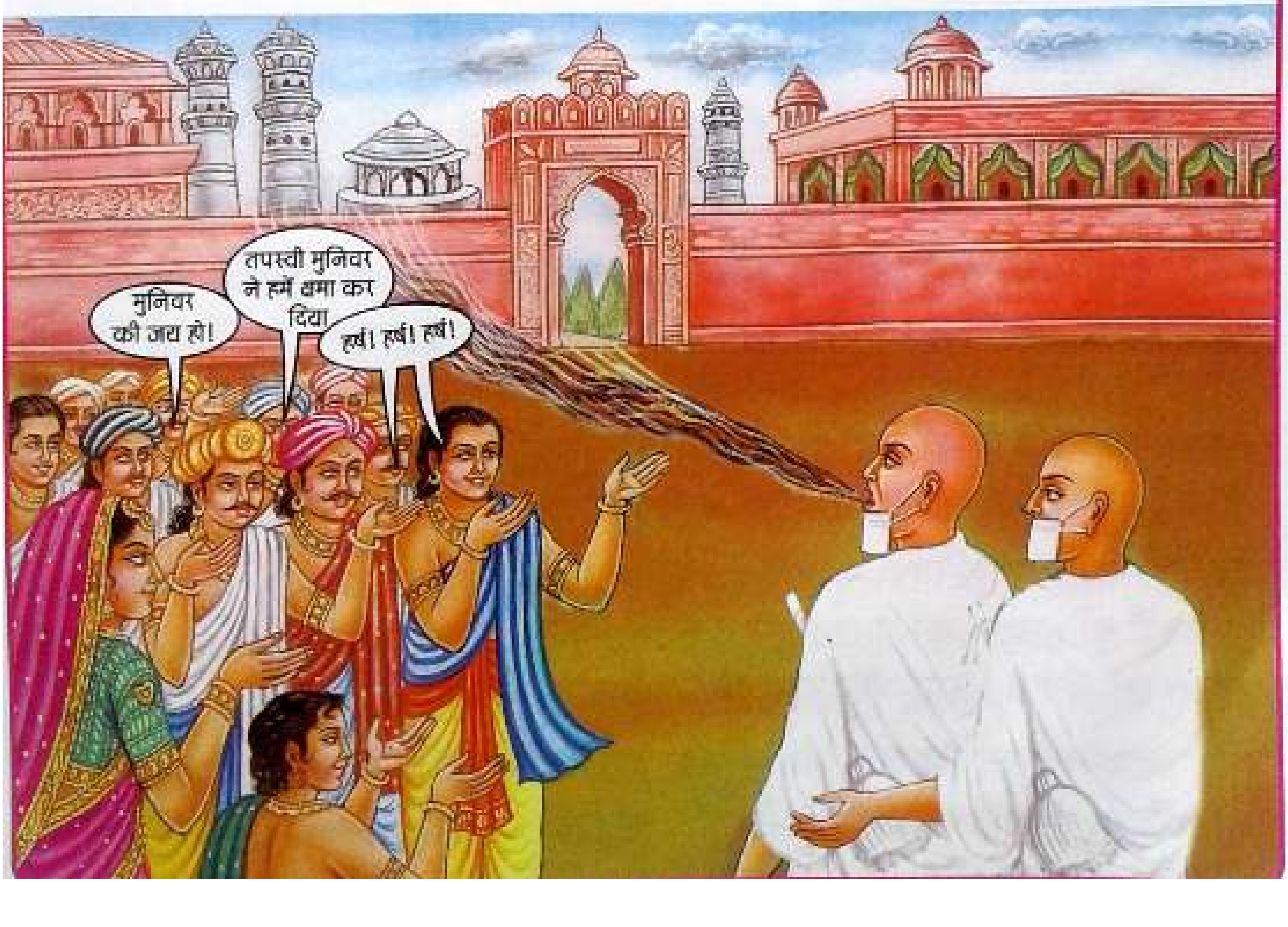

Scanned by CamScanner

पुनः संयम में स्थिर बने संभूत मुनि को अपने साथ लेकर चित्त मुनि नगर के बाहर स्थित राज्योद्यान में पहुँचे। राज्योद्यान में आकर दोनों मुनियों ने आवागमन के पापों की आलोचना की और संभूत मुनि ने अपनी भयंकर भूल के लिए चित्त मुनि के समक्ष आलोचना, निंदा, प्रतिक्रमण कर प्रायश्चित ग्रहण किया।

तेजोलेश्या के द्वारा छोड़े गये धुँयें से अग्नि कण प्रकट हो गये थे जिन्हें वापस शरीर में खींचने से संभूति मुनि के शरीर में असह्य जलन होने लगी जिसे चित्त मुनि ने जान लिया। सोचा–'अब यह जलन प्राणान्त करेगी।' तब उन्होंने संथारा करने की सलाह दी। दोनों मुनियों ने उसी दिन संलेखना कर चारों आहारों का जीवन भर के लिये त्याग करते हुये संथारा कर लिया।

सम्पूर्ण घटनाचक्र का पता चक्रवर्ती सनत्कुमार को भी लगा। चक्रवर्ती सनत्कुमार ने अपने अधिकारियों से मुनि को कष्ट देने वाले दुस्साहसी अपराधी को अपने सम्मुख प्रस्तुत करने का आदेश दिया। राज्याधिकारियों ने कुछ ही समय पश्चात् राज्य के महामंत्री नमुचि को अपराधी के रूप में महाराज के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया।

चक्रवर्ती सनत्कुमार ने मुनिवर के अपराधी नमुचि महामंत्री को रस्सों से बाँधकर पूरे नगर में घुमाने का आदेश दिया और कहा–"हम जब मुनिवरों के दर्शनार्थ राज्योद्यान में जाएँ तो इस महापापी को वहाँ उपस्थित किया जाए।"

संभूत मुनि का निदान

फिर चक्रवर्ती सनत्कुमार अपने अनुपम ऐश्वर्य के साथ मुनियों के दर्शनार्थ उद्यान की ओर चल दिये। उधर रस्सों से बाँधकर महामंत्री नमुचि को समस्त हस्तिनापुर में घुमाया गया। नगर-परिक्रमा पूर्ण होने पर उसे राज्योद्यान में लाया गया। चक्रवर्ती ने मुनिवरों से कहा–"पूज्यवर ! आपका अपराधी आपके समक्ष है। आज्ञा कीजिए, इसे क्या दण्ड दिया जाए।"

क्षमासागर मुनिवरों ने अत्यंत सहजभाव से उसे मुक्त कर देने के लिए कहा। मुनिवरों की आज्ञा का पालन करते हुए चक्रवर्ती सनत्कुमार ने तत्काल उसे मुक्त करने का संकेत किया और नगर से निष्कासन का आदेश दिया।

चक्रवर्ती सनत्कुमार की चौंसठ हजार राजमहीषियों के साथ नारीरत्न, पट्टमहिषी श्रीदेवी (सुनन्दा) भी मुनिवरों के दर्शनार्थ वहाँ आई थी। सभी ने

Scanned by CamScanner

मुनिवरों को वन्दन-नमन किया। श्रीदेवी (सुनन्दा) भी मुनि चरणों में नमन करने झुकी। मुनि संभूत के चरणों में सिर झुकाकर नमन करते हुए अनजाने में पट्टमहिषी श्रीदेवी (सुनन्दा) के सुकोमल, सघन, भौरों के समान काले घुँघराले, लम्बे बालों की एक सुन्दर लट का संभूत मुनि के चरणों से स्पर्श हो गया।

संभूत मुनि ने एक-दो क्षण का पट्टमहिषी की केशराशि का वह अत्यंत सुखद, शीतल व मधुर स्पर्श अनुभव किया। फिर आँखें खोलकर सनत्कुमार चक्रवर्ती का अद्‌भुत और अनुपम ऐश्वर्य देखा, सुनन्दा आदि स्त्री-रत्नों के अनुपम रूप लावण्य को देखा तो मन ही मन तत्क्षण निदान कर लिया—अगर मेरी तपस्या का कुछ भी फल हो तो अगले भव में मैं चक्रवर्ती बनकर संसार का सुख भोग करूँ। एक पल के सुन्दर नारी के सुकोमल केशराशि स्पर्श ने जैसे उन मुनि को संयम के उत्तुंग शिखर से भोग-वासना के रसातल में धकेल दिया।

Scanned by CamScanner

इधर संभूत मुनि, चक्रवर्ती की अनुपम ऋद्धि के लिए निदान की बात सोच रहे हैं। उधर चित्त मुनि ने संभूत के चेहरे पर आए भावों को देखकर अपने ज्ञान-बल से यह जान लिया कि संभूत मुनि कौड़ियों के मोल अनमोल संयम को गंवा रहे हैं। उन्होंने तुरन्त ही अपने भ्राता मुनि को सचेत किया—"देवानुप्रिय ! तुम यह क्या सोच रहे हो ? अपने मन रूपी अश्व को अंकुश में रखो। इस तरह उसे भटकने मत दो। यदि इन्हीं विचारों में बह गए तो अनर्थ कर बैठोगे। अपनी आत्मा को कर्ममल रहित बनाने के स्थान पर महाभयंकर दुष्कर्मों के बोझ से भारी भरकम बना लोगे।

परन्तु संभूत मुनि तो चक्रवर्ती की अनुपम ऋद्धि और अद्‌भुत ऐश्वर्य में खोए-खोए से थे। चित्त मुनिवर की सचेत करने वाली वाणी उनके कानों तक नहीं पहुँच पाई। वह चेतावनी व्यर्थ हो गई। संभूत मुनि ने निदान कर ही लिया।

कुछ समय तक चक्रवर्ती सनत्कुमार और राजपरिवार के अन्य जनों ने मुनिदर्शन किया और फिर वन्दन-नमन कर पुनः राजमहल लौट गए।

चित्त मुनि और संभूत मुनि आयुष्य पूर्ण होने पर समाधिपूर्वक साथ-साथ ही काल करके सौधर्म कल्प के पद्‌मगुल्म नामक विमान में वैमानिक देव हुए।

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती

देवायु पूर्ण होने पर संभूति मुनि के जीव ने काम्पिल्यपुर नगर के राजा पांचालपति ब्रह्मराज की पत्नी चूलनी के गर्भ से राजकुमार के रूप में जन्म लिया और चित्त का जीव पुरमिताल नगर के गुणपुंज नामक श्रेष्ठी की पत्नी नन्दा के गर्भ से उत्पन्न हुआ। गुणपुंज ने अपने पुत्र का नाम 'गुणसार' रखा। इस श्रेष्ठी-पुत्र ने युवावस्था प्राप्त हो जाने पर भी अपने आपको विषय-भोगों में नहीं उलझने दिया। एक दिन किसी मुनिराज का सद्‌बोधन सुन वह संसार-विरक्त बना और प्रव्रजित होकर श्रमणधर्म की साधना में रत हो गया।

पांचालपति ब्रह्मराज ने अपने सुन्दर व तेजस्वी नवजात पुत्र का नाम 'ब्रह्मदत्त' रखा। राजकुमार ब्रह्मदत्त राजसी वैभव के मध्य बड़ा होने लगा। अचानक एक दिन ब्रह्मराज की मृत्यु हो गई। राजकुमार ब्रह्मदत्त उस समय मात्र बारह वर्ष का था। राज्य के विधान का पालन करते हुए ब्रह्मदत्त को राज्य का राजा बना दिया गया। ब्रह्मराज के अत्यंत प्रिय मित्र कौशलेश नरेश राजा दीर्घ को ब्रह्मदत्त का अभिभावक एवं काम्पिल्य नगर का संरक्षक बनाया गया।

राजा दीर्घ 'बाहर से कुछ और एवं अंदर से कुछ और'—ऐसे दोहरे व्यक्तित्व का मुखौटा पहने था। उसने अपने स्वर्गस्थ मित्र के पुत्र व राज्य के साथ

Scanned by CamScanner

विश्वासघात किया। काम्पिल्य राज्य के राजकोष और राजसेना को तो उसने अपने अधीन किया ही, अपने मित्र की पत्नी रानी चूलनी को भी अपनी ओर आकर्षित कर लिया। वे दोनों अब एक ही महल में पति-पत्नी की तरह रहने लगे। कुछ वर्षों तक यह खेल चलता रहा पर असली राजा ब्रह्मदत्त को धीरे-धीरे बड़ा होते देख राजा दीर्घ घबराने लगा। अब ब्रह्मदत्त को रास्ते से हटाना आवश्यक हो गया। दीर्घ ने चूलनी से इस विषय में बात की। और दोनों ने उसे मौत के घाट उतारने की योजना बना ली।

योजनानुसार ब्रह्मदत्त का विवाह रचाया गया। ब्रह्मदत्त विवाह करके नव-वधू को लेकर आया तो उस नव-विवाहित जोड़े को प्रथम रात्रि में लाक्षागृह में सुलाया गया और अर्द्ध-रात्रि में चुपचाप लाक्षागृह को आग लगा दी गई।

परन्तु राज्य के महामन्त्री को उनकी इस योजना का पहले से ही पता लग गया था। उसने बहुत ही गुप्त रूप से लाक्षागृह से नदी तट तक सुरंग बनवा दी।

Scanned by CamScanner

योजनानुसार जैसे ही राजा दीर्घ के व्यक्तियों ने लाक्षागृह में आग लगाई तो अमात्य के सेवकों ने ब्रह्मदत्त को सुरंग रास्ते बाहर निकालकर उसे जलने से बचा लिया। नदी तट पर अमात्य-पुत्र वरधनु पहले से तैयार था। दो तीव्रगामी अश्व भी वहाँ तैयार थे। ब्रह्मदत्त एवं वरधनु दोनों ही घोड़ों पर सवार हो गए। घोड़े पूरी रात दौड़ते रहे।

प्रातः दीर्घ व चूलनी को सन्देश मिल गया कि लाक्षागृह में कोई लाश नहीं है। दीर्घ ने अपने विश्वस्त सुभटों को चारों दिशाओं में दौड़ा दिया। उन्हें स्पष्ट आदेश था कि जहाँ भी ब्रह्मदत्त या वरधनु या दोनों नजर आयें, उन्हें मौत के घाट उतार दिया जाए। आगे-आगे ब्रह्मदत्त व वरधनु के तीव्रगामी अश्व और उनके पीछे लगी हुई थी राजा दीर्घ की अश्व सवार सुभट सेना। आँख-मिचौनी के खेल की तरह इस सुभट-सेना से अपने आपको बचाते-बचाते ब्रह्मदत्त व वरधनु पांचाल राज्य की सीमा से बाहर निकल गए।

लम्बे समय तक ब्रह्मदत्त और वरधनु राजा दीर्घ के सुभटों से बचते हुए इधर-उधर फिरते रहे। पुण्य की प्रबलता प्रगट हुई तो कई स्थानों पर ब्रह्मदत्त ने युवा कन्याओं से परिणय रचाया। अनेक राज्य के राजाओं को अपना शौर्य और रणकौशल बतलाकर उनको युद्धों में विजय का हार पहनवाया। सुखों और दुःखों के झूले में झूलते, तलवारों के जौहर दिखलाते और यशार्जन करते हुए ब्रह्मदत्त ने वर्षों तक देशाटन किया।

इसी अन्तराल में मगधपति, वाराणसी नरेश, कटकेश, हस्तिनापुर-महाराजा, चम्पापति आदि अनेक राजा ब्रह्मदत्त के सहयोगी बन गए। देशाटन करते-करते ब्रह्मदत्त जब राजगृह पहुँचा तो वहाँ रहते हुए उसने अपने विगत जीवन पर चिन्तन किया और निर्णय लिया–"अब तो अपने राज्य काम्पिल्य नगर को पुनः प्राप्त करके अपराधियों को दंड देने का अवसर आ चुका है।" उसने अपने मित्र और सहयोगी अमात्यपुत्र वरधनु को मगध, वाराणसी, कटक, हस्तिनापुर आदि राज्यों के राजाओं के पास भेजा। युद्ध में सम्मिलित होने का न्यौता देने पर ये सभी नरेश ब्रह्मदत्त की आज्ञानुसार युद्ध में भाग लेने के लिए तत्पर हो गये।

Scanned by CamScanner

ब्रह्मदत्त के इस युद्ध अभियान की सूचना राजा दीर्घ को भी मिल गई। वह भी अपनी विशाल सैन्यवाहिनी के साथ रणक्षेत्र में आ गया।

युद्ध प्रारम्भ हुआ। दोनों सेनाओं में भयंकर मार-काट मची। कई दिनों तक उस धरती की माटी मानव-खून से सिंचित होती रही। दोनों पक्ष की सैन्यशक्ति बराबर की थी। अत: दोनों पक्षों में जीत-हार का कोई निर्णय नहीं निकल पाया।

अंत में दोनों पक्षों ने निर्णय लिया कि ब्रह्मदत्त व दीर्घ परस्पर द्वन्द युद्ध करें। द्वन्द में जिसकी विजय हो, उसे ही जीता हुआ माना जाए। ब्रह्मदत्त व दीर्घ ने इसे स्वीकार किया और उनमें परस्पर द्वन्द युद्ध प्रारम्भ हुआ। राजा दीर्घ यद्यपि अधम और पतित पुरुष था फिर भी उसमें आश्चर्यजनक पौरुष था। द्वन्द्व युद्ध में दोनों की बराबर टक्कर रही। सभी चित्रलिखित से खड़े उन दोनों के द्वन्द-युद्ध को देख रहे थे तभी अचानक वहाँ एक आश्चर्यजनक घटना घटी।

Scanned by CamScanner

अचानक चक्रवर्ती के पास रहने वाले चौदह रत्नों में से एक 'चक्ररत्न' प्रलयकालीन अनल की भाँति ज्वालाओं को उगलता हुआ वहाँ प्रकट हुआ और ब्रह्मदत्त की प्रदक्षिणा कर उसके ऊपर आकाश में स्थित हो गया।

ब्रह्मदत्त ने चक्ररत्न को देखा तो तुरंत हाथ बढ़ाकर अपनी तर्जनी पर उसे धारण कर लिया और घुमाकर दीर्घ की ओर फेंक दिया। क्षण भर में पापी दीर्घ का मस्तक कटकर धड़ से अलग हो गया। ब्रह्मदत्त की विजय हुई।

सोलह वर्षों तक इधर-उधर भटकने के पश्चात् ब्रह्मदत्त ने अपने पैतृक राज्य को प्राप्त कर संतोष का अनुभव किया। कुछ वर्षों तक राज्य शासन को सुव्यवस्थित बनाकर वह अपनी विशाल सेना के साथ छह खण्डों की विजय के लिए निकल पड़ा। सम्पूर्ण भरत-खण्ड पर विजय प्राप्त कर वह चक्रवर्ती बन देवेन्द्र के समान अनुत्तर सांसारिक भोगों को आनन्द के साथ भोगने लगा।

Scanned by CamScanner

पूर्व भवों की स्मृति

एक दिन ब्रह्मदत्त अपनी रानियों और परिजनों से घिरा हुआ अपने रंगभवन में बैठा मधुर संगीत एवं मनोहारी नाटकों से मनोरंजन कर रहा था। उच्चकोटि के कलाकारों द्वारा अभिनीत अत्यंत मनोहारी उस नाटक को देखते हुए उसके हृदय में धुंधली-सी स्मृति जागृत हुई—'इस तरह का विस्मय-विमुग्ध करने वाला नाटक मैंने पहले भी कहीं देखा है।'

स्मृति पर अधिक दबाव डालने, एकाग्रचित्त बनकर चिन्तन करने और ज्ञानावरणीय कर्म के उपशम होने से उसे अपने स्मृति-पटल पर पद्मगुल्म विमान के देव-भव व उससे पहले के चार अन्य भव यथावत् दिखाई देने लगे। अपने पूर्व के इन पाँच भवों को देखकर चक्रवर्ती सम्राट् ब्रह्मदत्त मूर्च्छित हो गया। विविध शीतलोपचार करने पर उसकी मूर्च्छा टूटी।

Scanned by CamScanner

आत्मीय-जनों के अनेक बार पूछने पर भी ब्रह्मदत्त ने अपने पूर्व भवों के रहस्य को किसी के सामने प्रकट नहीं किया। उसके अन्तर में अपने पूर्वभव के सहोदर से मिलने की अभिलाषा जाग उठी। वह निरन्तर यही विचार करता रहा—'अपने पूर्वभवों के सहोदर से कहाँ, कब और कैसे मिल सकूँगा ?'

एक दिन ब्रह्मदत्त के मन में अपने पाँच पूर्वभवों के सहोदर को ढूँढ़ने का एक उपाय आया। तदनुसार उसने दो पंक्तियों का एक श्लोक बनाया। उस श्लोक की प्रथम पंक्ति को उसने अपने सम्पूर्ण राज्य में प्रसारित करवा दी और घोषणा करवा दी—"जो भी व्यक्ति इस श्लोक के द्वितीय पद की पूर्ति करेगा, उसे मैं अपना आधा राज्य पुरस्कार में दूँगा।"

श्लोक का पूर्वार्द्ध प्रायः प्रत्येक नागरिक को कण्ठस्थ हो गया। आधा राज्य पुरस्कार में मिल रहा था अतः सभी आधे श्लोक को गुनगुनाकर उसकी पूर्ति करने का प्रयास किया करते परन्तु पूर्ति होती कैसे ? कोई रहस्य को जाने तो पूर्ति हो। जहाँ देखो, जब देखो—बालक, जवान, बूढ़े सभी की जिह्वा से उन दिनों वही आधा श्लोक सुनाई पड़ता था—

"आश्व दासौ मृगौ हंसौ, मातंगावमरौ तथा।"

—अर्थात् दोनों दासी-पुत्र, मृग, हंस, चांडाल व देव हुए।

मुनि द्वारा श्लोक पूर्ति

एक दिन विहार क्रम में गुणसार मुनि (अर्थात् चित्त के जीव) का काम्पिल्य नगर में पधारना हुआ। मुनिवर नगर के बाहर स्थित एक उद्यान में विराजित हुए। उद्यान के निकटवर्ती खेत के कुएँ पर रहट चलाते हुए किसान वही श्लोक की पंक्ति गुनगुना रहा था। एक बार, दो बार फिर तीसरी बार भी किसान ने जब वे ही पंक्तियाँ उच्चारित कीं तो मुनिवर का ध्यान उन पंक्तियों पर चला गया। पंक्तियों पर चिन्तन करते, मन में संकल्प-विकल्प करते चित्त मुनि को जातिस्मरण ज्ञान हो गया। वे भी अपने पूर्व के उन्हीं पाँच भवों को देखने लगे। फिर विचार किया—'जो पंक्तियाँ मैंने अभी-अभी श्रवण की हैं, अवश्य वे मेरे सहोदर ने बनायी हैं और वह मुझे ढूँढ़ना चाहता है।' मुनि ने श्लोक की पूर्ति करते हुए कहा—

Scanned by CamScanner

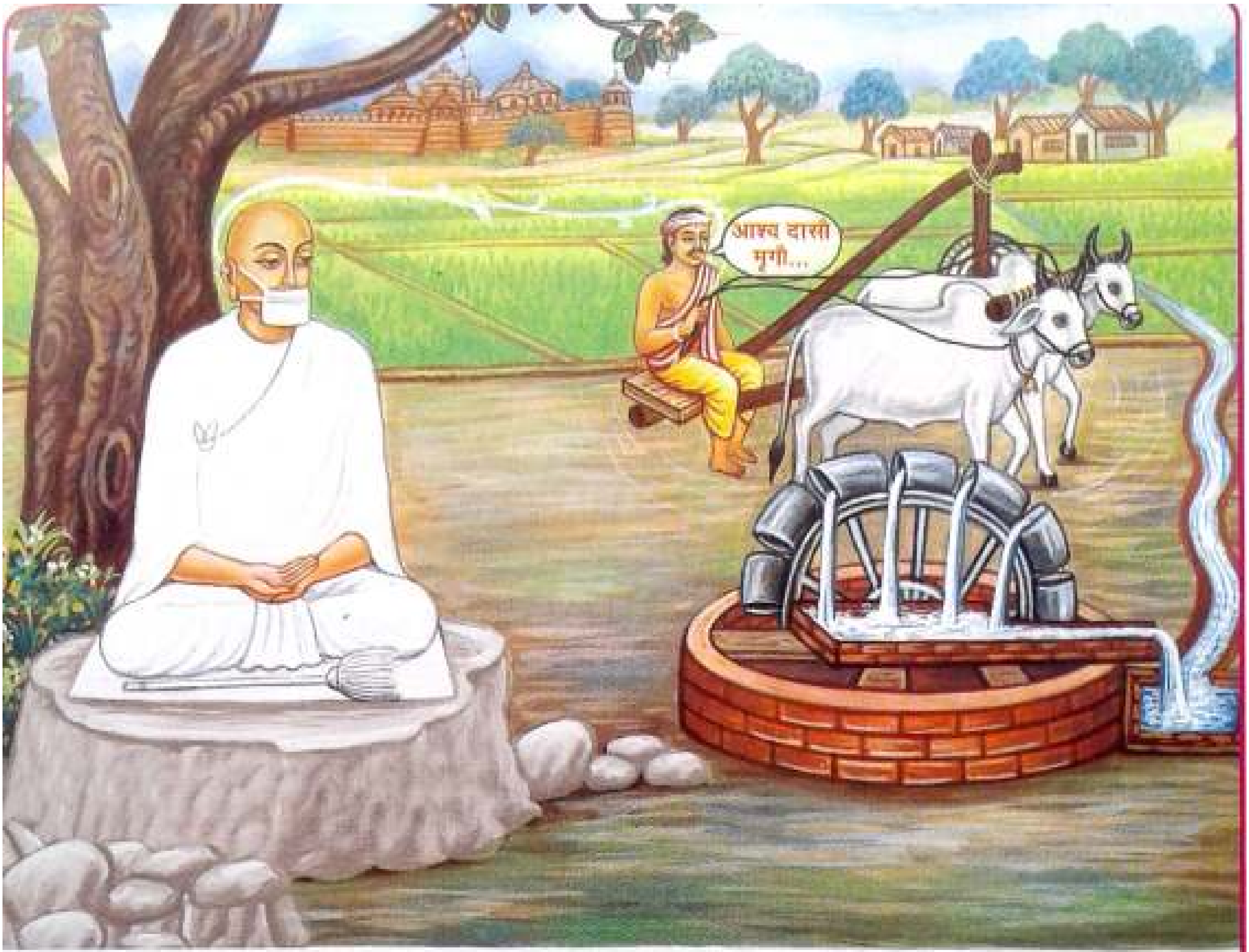

"एषा नो षष्ठिका जातः अन्योऽन्याभ्यां वियुक्तयोः।"

अर्थात् यह हमारा छट्ठा जन्म है, जिसमें हम अलग-अलग अन्य-अन्य स्थान पर, अन्य-अन्य कुल जाति में उत्पन्न हुए हैं।

किसान ने सुनी यह पंक्ति। आवाज की दिशा में देखा तो उद्यान में ध्यानस्थ मुनि दिखाई दिए। किसान ने याद करके पुनः वह पंक्ति दोहराई। दो, तीन बार मुनि द्वारा कही गई पंक्ति को दोहराने के पश्चात् वह सीधा राजभवन की ओर चल दिया। आधा राज्य प्राप्त करने की कल्पना से ही उसका हृदय बाँसों उछल रहा था।

सामने राजभवन आया तो वह रुक गया। राजद्वार पर खड़ा अंगरक्षक उसे राजदरबार तक ले गया। राजदरबार में उस किसान ने चक्रवर्ती सम्राट् ब्रह्मदत्त को अभिवादन किया और उद्घोषित अपूर्ण श्लोक की पूर्ति करते हुए पूरा श्लोक सुना दिया। किसान के मुख से अपनी श्लोकपूर्ति सुनकर ब्रह्मदत्त पुनः मूर्च्छित

Scanned by CamScanner

हो गया। अपने महाराज को इस तरह मूर्च्छित होते देख वहाँ बैठे सभासद क्षुब्ध हो गये। कुछ सभासद बोल उठे—"यह किसान दुष्ट है। इसने ही कठोर वचन सुनाकर महाराज को मूर्च्छित बनाया है। इसे दंड मिलना चाहिए।"

महाराज को मूर्च्छित होते देख और अपने लिए दंड की बात सुनकर किसान के चेहरे पर हवाईयाँ उड़ने लगी। कहाँ तो वह सिंहासन पर बैठकर राजसुख भोगने की कल्पना में डूबा था और कहाँ परिस्थिति ने उसके लिए राजदंड का अवसर उत्पन्न कर दिया था ? वह भयभीत व घबराहट भरे स्वर में कह उठा—"मुझे दंडित मत कीजिए। यह श्लोक मैंने पूरा नहीं किया है ? इसकी पूर्ति तो उद्यान में विराजमान एक महात्मा ने की है।"

उधर अनुकूल उपचार से ब्रह्मदत्त की मूर्च्छा दूर हुई। स्वस्थ होकर ब्रह्मदत्त ने किसान से पूछा—"भाई ! क्या इस श्लोक को तुमने पूर्ण किया है ?"

किसान ने हाथ जोड़कर कहा—"नहीं नर देव ! इसकी पूर्ति तो उद्यान में विराजित एक महात्मा ने की है।"

सहोदरों का मिलन

ब्रह्मदत्त समझ गया कि महात्मा और कोई नहीं, मेरे पूर्व-भव के सहोदर ही हैं। अत्यंत प्रसन्न होकर ब्रह्मदत्त ने अपने समस्त आभूषण पारितोषिक के रूप में उस किसान को दे दिया।

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती अपने समस्त राजपरिवार एवं सम्पूर्ण ऐश्वर्य के साथ उन महात्मा के दर्शनार्थ उद्यान में गया। मुनिवर को देखकर सभी ने उन्हें विधिवत् प्रणाम किया। मणि-मुक्ताओं से प्रकाशमान राजमुकुट उन चरणों में श्रद्धा से झुक गया।

गुणसार मुनि के संकेत पर सभी सविनय मुनिवर के पास बैठ गये। मुनिवर ने कहा—"राजन् ! पूर्व के पाँच भवों में हम सहोदर होकर साथ-साथ रहे लेकिन इस छट्ठे जन्म में हम एक-दूसरे से बहुत दूर हो गए। अलग-अलग कुल व देश में उत्पन्न होने के कारण हम एक-दूसरे के सुख-दुःख में सहभागी नहीं बन सके।"

इस पर ब्रह्मदत्त ने कहा—"महात्मन् ! मैंने पूर्व जन्म के शुभ कर्मों के फलस्वरूप चक्रवर्ती सम्राट् की ऋद्धि प्राप्त की है। आप मेरे पूर्व के पाँच भवों के सहोदर रहे हैं। अतः मेरी प्रार्थना है कि आप यह दर-दर भटकना छोड़िए, जीर्ण-शीर्ण वस्त्रों में मैले-कुचेले रहने का त्याग करिए, भोजन के लिए भिक्षा लेना

Scanned by CamScanner

और तपश्चरण के नाम पर भूखे-प्यासे रहना बंद करिए और मेरे साथ मेरे राजमहलों में चलकर उपलब्ध अपरिमित भोग-सामग्री का भोगोपभोग करिए। आप चाहें तो मैं अपने आधे राज्य का अधिकारी आपको बना दूँगा। यह प्रव्रज्या तो निश्चय ही दु:खप्रद है। मुझे भोग रुचिकर हैं और मैं चाहता हूँ आप भी योग त्याग कर भोग मार्ग पर आ जाएँ।"

योगी मुनि का उद्‌बोधन

मुनि गुणसार ने ब्रह्मदत्त चक्री से कहा–"हे काम-भोग लुब्ध ब्रह्मदत्त ! संसार के समस्त काम-भोग दु:खोत्पादक हैं। राग-रंग, गीत-संगीत व नाटकादि विडम्बना से भरे हैं। पूर्व भव में हम चाण्डाल जैसी अधम जाति में जन्मे, रहे और सभी लोगों के घृणा-पात्र बने। उस समय त्याग का पथ ग्रहण कर उत्कृष्ट संयम का पालन करने से शुभ कर्मों का उपार्जन किया। अपने निदान के कारण तुमने उन शुभ कर्मों के परिणाम में यह महान ऋद्धि प्राप्त की है। पर उसी निदान के फलस्वरूप तुम संसार के मोह-माया, काम-भोग रूपी दलदल में फँस गए हो।

Scanned by CamScanner

हे राजन् ! यह जीवन क्षणिक है। अतः समय रहते जो विपुल शुभानुष्ठान नहीं करता वह निश्चित ही मृत्यु के मुख में पहुँचने पर पश्चाताप करता है और धर्माचरण सेवन नहीं करने के कारण परलोक में भी पश्चाताप करता है।

चित्त मुनि ने उसे उद्‌बोधन देते हुए कहा—

जहेह सीहो व मियं गहाय, मच्चू नरं नेइ हु अन्तकाले।
न तस्स माया व पिया व भाया, कालम्मि तम्मिंऽसहरा भवंति।।

—अर्थात् जिस प्रकार वनराज सिंह अपने शिकार मृग को दबोचता है और पकड़कर ले जाता है, वैसे ही आयु समाप्त होने पर अन्तकाल में मृत्यु भी मानव को पकड़कर ले जाती है। तुम्हें यह समझ लेना चाहिए कि उस अंतिम काल में माता-पिता, भाई-बन्धु, ऋद्धि, राज-परिवार, नौकर-चाकर, धन-धान्य आदि कोई काम नहीं आता। जीव केवल अपने किए शुभाशुभ कर्मों को लेकर परभव को प्रयाण करता है।

Scanned by CamScanner

हे राजन्! तुमने मुझे अपना आधा राज्य देने की बात कही। हे देवानुप्रिय! मैं तुम्हें एक सम्पूर्ण राज्य का, ऐसे राज्य का जिसे लेकर तुम्हारा भी मान बढ़ेगा और जिसे तुम्हें देकर मेरा भी मान बढ़ेगा, उस राज्य का अधिकारी बनाता हूँ। तुम अपनी ऋद्धि, अपना राज्य, अपना नश्वर वैभव छोड़कर मेरे पास, मेरे साथ आ जाओ, संयमी बनकर उत्कृष्ट संयम के पालन द्वारा शाश्वत राज्य व शाश्वत सुख के अधिकारी बनो।"

चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त और मुनि गुणसार में इस तरह सुख-दुःख के फल-विपाक की लम्बी चर्चा चली। एक ओर प्रबल भोग और दूसरी तरफ था निष्काम-योग।

योगी की सुगति भोगी की दुर्गति

मुनि के बहुत समझाने पर भी ब्रह्मदत्त पूर्व भव में किये गये निदान के कारण वैषयिक सुख भोगों को न त्याग सका। वह यह तो समझ गया कि ये विषय-भोग जन्म-मरण रूप संसार परिवर्द्धक, दुर्गतिकारक और आर्त्तध्यान के हेतु हैं। उसने मुनि गुणसार (चित्त) से कहा—"हे मुनिवर! मैं आप द्वारा दिए गए सद्‌बोध को जानते और मानते हुए भी दल-दल में फँसे हुए हाथी की तरह काम-भोगों में फँसकर उनके अधीन बन निष्क्रिय हो गया हूँ। त्याग-मार्ग के शुभ परिणामों को देखता हुआ भी उस ओर एक भी कदम नहीं बढ़ा सकता और सद्धर्म का अनुसरण नहीं कर सकता।"

मुनि ने भी समझ लिया कि मेरे पाँच पूर्वभवों का यह सहोदर अपने प्रेय भोगों का त्याग कर संयम एवं श्रेयमार्ग ग्रहण नहीं कर सकता। तब मुनिवर ने कहा—"हे ब्रह्मदत्त! समय रूपी पंछी पंख फैलाए द्रुतगति से उड़ता चला जा रहा है। जिन मानवीय भोगों में तुम उलझे हुए हो, वे भी नित्य नहीं हैं और क्षीण पुण्य होने पर ये भोग मानव को उसी प्रकार छोड़ देते हैं जैसे क्षीणफल वाले वृक्ष को उस पर रहने वाले पंछी। तुम्हारी बुद्धि यदि भोग त्यागने और धर्माचरण करने की नहीं है तो आर्य कर्म करने व अनुकम्पाशील बनने की ओर अपने कदम बढ़ाओ जिससे उच्च गति अर्थात् वैमानिक देवगति की प्राप्ति कर सको।"

परन्तु ब्रह्मदत्त ने मुनि की बात नहीं मानी। अन्त में मुनि ने कहा—"हे मेरे पूर्व भवों के सहोदर! इस समय तुम आरंभ-परिग्रह में पूर्ण आसक्त हो अतः मेरा तुम्हें सम्बोधित करना व्यर्थ ही गया।"

Scanned by CamScanner

गुणसार मुनि इतना कहकर काम्पिल्य नगर से विहार कर गए। उन्होंने वर्षों तक उत्कृष्ट तपश्चरण किया एवं शुद्ध संयम का पालन किया। आयुष्य पूर्ण होने पर देह त्यागकर वे उच्चतम सुगति के अधिकारी बने और सिद्ध-क्षेत्र में जा ज्योति रूप में विराजमान हुए।

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती मृत्युपर्यन्त अपनी अनुत्तर ऋद्धियों और कामभोगों में आकण्ठ निमग्न रहा। आयु के अंतिम वर्षों में अति तीव्र आर्त्त और रौद्र ध्यान करने के परिणाम स्वरूप सर्वोत्तम सुखों में जीवन व्यतीत करने वाले इस चक्रवर्ती ने आयु पूर्ण होने पर निम्नतम दुर्गति को प्राप्त कर सातवीं नरक के महाभयंकर कष्टप्रद जीवन को प्राप्त किया।

कथासार—चित्त मुनि उत्कृष्ट संयम, शुद्ध आराधना कर सिद्ध-बुद्ध मुक्त हुये वही ब्रह्मदत्त भोगों में डूबकर मृत्यु पश्चात् सातवीं नरक में गया। उत्तराध्ययन सूत्र के चित्र सम्भूतीय नामक तेरहवें अध्ययन में मुनि व ब्रह्मदत्त का महत्वपूर्ण वार्तालाप दिया है। जिसका सार है कि विशुद्ध अध्यात्मिक चेतना से ही कर्म बन्धन से मुक्ति मिल सकती है।

चित्रांकन एवं मुद्रण : संजय सुराणा द्वारा पद्मोदय प्रकाशन, आगरा फोन : 0562-2851165, 9319203291

Scanned by CamScanner

श्री जयमल जैन पार्श्व पद्मोदय फाउण्डेशन चेन्नई के ट्रस्टीगण

वंश परम्परागत ट्रस्टी :

अध्यक्ष : श्री ज्ञानचन्द जी मुणोत, चेन्नई
उपाध्यक्ष : श्री भंवरलाल जी लोढ़ा, चेन्नई
उपाध्यक्ष : श्री ए. एन. प्रकाशचन्द जी बोहरा, चेन्नई
उपाध्यक्ष : श्री अमरचंद जी बोकडिया, चेन्नई
उपाध्यक्ष : श्री शांतिलाल जी बोहरा, चेन्नई
मंत्री : श्री नरेन्द्रकुमार जी मरलेचा, चेन्नई
श्री नवरतनमल जी गादिया, चेन्नई

आजीवन ट्रस्टी

- श्री चेनराज जी गोटावत, बैंगलोर
- श्री धरमचंद जी लूंकड, चेन्नई
- श्री उत्तमचन्द जी बोकड़िया, चेन्नई
- श्री विजयसिंह जी पींचा, चेन्नई
- श्री गौतमचन्द जी रूणवाल, चेन्नई
- श्री उत्तमचंद जी बागमार, इरोड़
- श्री एस. गौतमचन्द जी श्रीश्रीमाल, सिकन्द्राबाद
- श्री बाबूलाल जी कांकरिया, हैदराबाद
- श्री अमरचंद जी चोरडिया, बेंगलोर
- श्री रिखबचंद जी बोहरा, चेन्नई
- श्री विजयराज जी धारीवाल, जोधपुर

卐 चमत्कारी जय जाप 卐

पूज्य जयमल जी हुआ अवतारी, ज्यांरा नाम तणी महिमा भारी।
कष्ट टले मिटे ताव तपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
पूज्य नामे सब कष्ट टले, वली भूत-प्रेत पिण नाय छले।
मिले न चोर हुवे गुप-चुपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
लक्ष्मी दिन-दिन बढ़ जावे, वली दुःख नेडो तो नहीं आवे।
व्यापार में होवे बहुत नफो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
अड़ियो काम तो होय जावे, वली बिगड़्यो काम भी बण जावे।।
भूल-चूक नहीं खाय डफो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
राज-काज में तेज रहे, वली खमा-खमा सब लोक कहे।
आछी जागा जाय रूपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
पूज्य नाम तणो जो लियो ओटो, ज्यारे कदे नहीं आवे टोटो।
घर-घर बारणे काय तपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
एक माला नित्त नेम रखो, किणी बात तणो नहिं होय धखो।
खाली विमाण अरु टलेजी सपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
स्वभक्त तणी प्रतिपाल करे, मुनिराम सदा तुम ध्यान धरे।
कोई परतिख बात मती उथपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।
पूज्य नाम प्रताप इसो जबरो, दुख कष्ट-रोग जावे सगरो।
केई भवां रा कर्म खपो, पूज्य जयमल जी रो जाप जपो।।

नोट—इस चमत्कारी जय जाप को नित्य पढ़ने से सम्यक्त्व सुदृढ़ बनता है।

पुस्तक प्राप्ति स्थान :

श्री जयमल जैन पार्श्व पद्मोदय फाउण्डेशन, चेन्नई
Jay Vatika, Marlesha Garden, 48, Hunters Road
(Gopal Menon Street), Vapery, Chennai-600 112

श्री जय ध्वज प्रकाशन समिति (शाखा-कार्यालय)
श्रुताचार्य चौथ स्मृति भवन, 39, विनोद नगर, ब्यावर (राज.)

श्री जयमल जैन पार्श्व-पद्मोदय राष्ट्रीय शिविर ट्रस्ट
C/o, श्री चैनराज जी गोटावत, एम. सी. गोटावत इलेक्ट्रीकल्स,
वी. एस. लेन, चिकपेट, बैंगलोर-560 053. फोन : 26571898, 26577455

Scanned by CamScanner

अणुप्पेहा-ध्यान प्रणेता, प्रवचन प्रभावक
डॉ. श्री पदमचन्द्र जी म. सा. के प्रवचन एवं संपादित पुस्तकें

सचित्र बड़ी साधु वन्दना भाग-1-5

आचार्य श्री
जयमल जी म.
की अमर रचना
बड़ी साधु वन्दना
की एक-एक कड़ी
पर विस्तृत विवेचन
करने वाले प्रवचन।
(प्रवचनकार : डॉ. पदमचन्द्र जी म. सा.)

रंगीन चित्रों द्वारा प्रत्येक गाथा का सजीव चित्रण किया गया है।
400 पृष्ठों का है।
प्रत्येक भाग पक्की बाइंडिंग युक्त

- प्रत्येक भाग का मूल्य : 350/- है
- पाँचों भागों को एक साथ मंगाने पर मूल्य : 1250/-

जय ध्वज

एक भवावतारी आचार्य
श्री जयमल जी म. सा. का सम्पूर्ण
जीवन चरित्र पाँच भागों में प्रकाशन
की योजना तीन भाग
प्रकाशित हो चुके हैं। चौथा भाग प्रेस में है।
प्रत्येक भाग का मूल्य : 350/- है

बड़ी साधु वन्दना सचित्र कथाएं

बड़ी साधु वन्दना में दिये गये ऐतिहासिक
चरित्रों के जीवन पर रंगीन सचित्र कथायें।
कुल 108 भाग प्रकाशन की योजना
प्रत्येक भाग का मूल्य : 25/- है।

एक भवावतारी आचार्य श्री जयमल जी म. सा.
का संक्षिप्त जीवन चरित्र एवं स्वाध्याय हेतु
नमोकार मंत्र, जयजाप, पच्चीस बोल स्तोक
संग्रह इत्यादि प्रकाशित साहित्य

पुस्तकें मंगाने के लिए निम्न पते पर अपना आर्डर भेजें।

श्री जयमल जैन पार्श्व-पद्मोदय फाउण्डेशन, चेन्नई
JAY VATIKA, MARLECHA GARDEN, 48, HUNTERS ROAD, (GOPAL MENON STREET) VEPERY, CHENNAI - 600 012.

Scanned by CamScanner